

अक्टूबर 2026, मूल्य : 40

पाखी

सृजन की उड़ान



संपादक

अपूर्व

महाप्रबंधक

अमित कुमार

शब्द-संयोजन

उषा ठाकुर

आवरण चित्र : बंशीलाल परमार

रेखाचित्र : मार्टिन जॉन, रोहित पाठक, आस्था

मूल्य :

प्रति	:	रु. 40.00
वार्षिक, रजिस्टर्ड डाक सहित	:	रु. 1000.00
आजीवन, रजिस्टर्ड डाक सहित	:	रु. 10000.00

भुगतान इंडिपेंडेंट मीडिया इनीशिएटिव सोसाइटी के नाम से किया जाए।

भुगतान ऑनलाइन या सीधे बैंक में भी जमा कर सकते हैं।

बैंक : UNION BANK

खाता संख्या : 520101255568785

IFSC : UBIN 0905011

बैंक शाखा : जी-28, सेक्टर-18, नोएडा-201301

उत्तर प्रदेश

प्रकाशक

इंडिपेंडेंट मीडिया इनीशिएटिव सोसाइटी

बी-107, सेक्टर-63, नोएडा-201309

गौतमबुद्ध नगर, उत्तर प्रदेश

दूरभाष : 0120-4330755

editor@pakhi.in

pakhimagazine@gmail.com

www.facebook.com/pakhimagazine

Web portal : www.pakhi.in

सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रकाशित सामग्री के उपयोग के लिए लेखक और प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है। प्रकाशित रचनाओं के विचार से प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अंतर्गत विचारणीय। स्वामित्व इंडिपेंडेंट मीडिया इनीशिएटिव सोसाइटी के लिए प्रकाशक, मुद्रक नारायण सिंह राणा द्वारा चार दिशाएं प्रिंटर्स प्रा.लि. जी-39, नोएडा से मुद्रित एवं बी-107, सेक्टर 63, नोएडा से प्रकाशित।



संपादकीय/अपूर्व

कृत्रिम बौद्धिकता, लेखक और संपादक	4
चिट्ठी आई है	7

कहानियां/लघु कथा

नू...राबाद	: विजयशंकर चतुर्वेदी	8
नर-पंथ	: दीर्घ नारायण	14
चलती चक्की देख कबीरा रोया	: धनेश दत्त पांडेय	23
साथ रहती दूरियां (लघु कथा)	: संतोष सुपेकर	28
लोकतंत्र की पगडंडी	: बिनीत कुमार	29
फुटपाथ पर अंकल जी	: अजय प्रकाश	31

कविताएं

दिविक रमेश की कविताएं	38
रेखा शाह आरबी की कविताएं	40
उत्पल बरकटकी की कविताएं	42
दीपांकर गुप्ता की कविताएं	44

मूल्यांकन

प्रतिशोध की हथेली पर कर्ण : सूरज पालीवाल	46
संकल्पों की रस्सी पर इच्छा-शक्ति का संतुलन : अश्वनी शांडिल्य	49

आलेख

इक्कीसवीं सदी की हिंदी कविता में स्त्री के सांस्कृतिक प्रतिरोध : कृष्णा प्रीति ए.आर.	51
‘रश्मीरथी’ के 75 वर्ष और कर्ण का आत्ममंथन : अजय चौधरी	56

स्थाई स्तंभ

कल्पित कथन

अवा आख्यान और जायसी का आखिरी कलाम : कृष्ण कल्पित

60

सत्याग्रह

सलमान रुश्दी : सैटेनिक वर्सेज पढ़ने के बाद आए कुछ खयाल : प्रियदर्शन

63

पाखी संवाद—जहां शब्द डरते नहीं/प्रतिक्रियाएं

वह शायर जिसने सत्ता से कहा 'मेरी आवाज मत सिलना'

65

रंगमंच को जनता की आवाज देने वाला वह कलाकार, जिसने मंच और मिट्टी के बीच की दूरी मिटा दी

69

जिस लेखक ने कहा था—'मैं गंगा का बेटा हूँ, मैं ही महाभारत लिखूंगा'

72

जब हिंदी ने पहली बार आधुनिक होकर अपनी आवाज पहचानी

77

प्रेम, देह और स्वतंत्रता के पक्ष में खड़ा ऐसा लेखक जिससे समाज डरता रहा

81

हत्या को साहित्य की सबसे दिलचस्प पहेली बनाने वाली लेखिका

84

डर की कहानियां लिखने वाला जिसने भीतरी डर को पहचान लिया

87

मनुष्य चेतना को स्वर देती रचनाएं

90

जब कविता ने आधुनिक मनुष्य की टूटन को आवाज दी

93





कृत्रिम बौद्धिकता, लेखक और संपादक

जून 2026 में साहित्य अकादमी और इंडिया इंटरनेशनल सेंटर ने नई दिल्ली में 'लेखकविहीन क्षितिज : एआई, सृजनशीलता और उभरता रचनात्मक वातावरण' विषय पर राष्ट्रीय संगोष्ठी की। शीर्षक ही अपने भीतर हमारे समय की बेचैनी को समेटे हुए था, लेखकविहीन क्षितिज। यानी क्या वह समय आ सकता है जब हमारे पास रचनाएं होंगी, लेकिन रचनाकार नहीं, शब्द होंगे, लेकिन उनके पीछे किसी मनुष्य का जीवनानुभव नहीं होगा? यह कोई काल्पनिक साहित्यिक प्रश्न नहीं रह गया है। साहित्य की संस्थाएं, लेखक, प्रकाशक और अनुवादक इस पर सार्वजनिक रूप से विचार कर रहे हैं। साहित्य अकादमी द्वारा आयोजित इस कार्यक्रम की बाबत मुझे अंग्रेजी पत्रिका से 'The Print' जानकारी मिली। इस पत्रिका में प्रकाशित आलेख का शीर्षक है—'Can AI write and edit? Delhi conclave examines its growing role'

अगस्त 2026 में अशोका विश्वविद्यालय के सेंटर फॉर ट्रांसलेशन की 'भाषावाद 3.0' राष्ट्रीय अनुवाद संगोष्ठी ने इस बहस को एक और महत्वपूर्ण दिशा दी। वहां सीधा सवाल था—क्या अनुवादक अप्रासंगिक हो जाएंगे? यह सवाल इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि अनुवाद साहित्य और कृत्रिम बुद्धिमत्ता के टकराव का शायद सबसे पहला बड़ा क्षेत्र है। मशीन एक भाषा को दूसरी भाषा में बदल सकती है, और कई मामलों में बहुत तेजी से और उपयोगी ढंग से बदल सकती है। लेकिन साहित्यिक अनुवाद केवल शब्दों को बदल देना नहीं है। विश्वविद्यालय की प्रोफेसर रीता कोठारी ने इस संदर्भ में कहा कि अच्छा साहित्य इतना परतदार होता है कि अनुवादक को भाषा की बारीकियों और गहरे संदर्भ में उतरना पड़ता है। अरुणाभ सिन्हा ने भी यह अंतर रेखांकित किया कि मशीन की प्रक्रिया मूलतः पूर्वानुमान और विशाल मात्रा में उपलब्ध सामग्री के आधार पर काम करती है, जबकि साहित्यिक अनुवाद में उस विचार तक पहुंचना जरूरी है जो शब्दों के पीछे छिपा होता है। इन दो समाचारों को पढ़कर मेरे मन में विचार या आप कह सकते हैं, सवाल उठा कि क्या साहित्य केवल शब्दों का सुंदर संयोजन है, जिसे अब कृत्रिम बुद्धिमत्ता भी तैयार कर सकती है, या साहित्य के भीतर कुछ ऐसा है जो मनुष्य के अनुभव, स्मृति, संवेदना और जीवन से आता है और जिसे कोई मशीन पूरी तरह नहीं पकड़ सकती? यह सवाल अब भविष्य का नहीं रहा। लेखक, अनुवादक, संपादक, प्रकाशक और पाठक, सभी इसके सामने खड़े हैं।

सच तो यह कि कुछ वर्ष पहले तक यह सवाल पूछना ही

मूर्खता होती कि क्या मशीन कहानी लिख सकती है, कविता रच सकती है या उपन्यास तैयार कर सकती है। आज सवाल बदल चुका है। मशीन लिख रही है। वह कविता लिख रही है, कहानी लिख रही है, अनुवाद कर रही है, संपादन कर रही है, शीर्षक सुझा रही है और कुछ ही क्षणों में वह सामग्री तैयार कर दे रही है जिसे लिखने में मनुष्य को कई घंटे, कई दिन या कभी-कभी कई महीने लग सकते हैं। इसलिए अब असली सवाल यह नहीं है कि कृत्रिम बुद्धिमत्ता लिख सकती है या नहीं। सवाल यह है कि जब मशीन लिखने लगेगी तो मनुष्य क्या पड़ेगा? यह सवाल अब केवल तकनीक की दुनिया का सवाल नहीं है। साहित्य ने भी इसे अपने सामने खड़ा कर लिया है।

यहां साहित्य के सामने पहला बड़ा सवाल खड़ा होता है कि साहित्य आखिर है क्या? क्या वह शब्द है, वाक्य है, कथानक है, भाषा है, शैली है या इन सबके पीछे छिपा हुआ मनुष्य का अनुभव? यदि जो कोई भी साहित्य केवल शब्दों का संयोजन मानता है तो तय मानिए ऐसों के लिए मशीन मनुष्य को बहुत जल्दी पीछे छोड़ देगी। मशीन के पास करोड़ों-करोड़ों शब्द हैं, लाखों किताबों का भाषाई संसार है। वह अलग-अलग शैलियों की पहचान कर सकती है, वाक्य रच सकती है और पाठक की पसंद के मुताबिक कहानी का स्वरूप बदल सकती है। लेकिन यदि साहित्य मनुष्य के जीए हुए अनुभव की अभिव्यक्ति है तो सवाल कहीं ज्यादा कठिन हो जाता है। क्योंकि मनुष्य जिस तरह दुःख को जानता है, मशीन उस दुःख के बारे में जितना भी जान ले, वह दुःख उसका अपना नहीं है। मनुष्य जिस तरह प्रेम करता है, प्रतीक्षा करता है, धोखा खाता है, किसी के मर जाने के बाद खाली कमरे में लौटता है, किसी पुराने पत्र को वर्षों बाद खोलता है या बचपन के किसी छोटे-से दृश्य को अचानक याद करके भीतर से भर उठता है, इन अनुभवों से ही साहित्य बनता है। मशीन इन अनुभवों को खूबसूरती से पिरो सकती है, इनके बारे में हजारों सुंदर वाक्य लिख सकती है, लेकिन क्या वह स्वयं इन अनुभवों से गुजरती है? यहीं से साहित्य और मशीन के बीच का सबसे बड़ा अंतर शुरू होता है। लेकिन इस अंतर को लेकर भी हमें सावधान रहना होगा। यह मान लेना कि मशीन कभी अच्छा साहित्य नहीं लिख सकती, जल्दबाज निष्कर्ष होगा क्योंकि मशीन की क्षमता को कम करके आंकना कतई ठीक नहीं है। वह भाषा की संरचना को समझती है, अलग-अलग साहित्यिक शैलियों की नकल कर सकती है, कथानक विकसित कर सकती है और ऐसी रचनाएं तैयार कर सकती है जो पहली नजर में मनुष्य

द्वारा लिखी गई रचना जैसी लगें। इसलिए आने वाली चुनौती केवल यह नहीं होगी कि मशीन अच्छी रचना लिख सकती है या नहीं। चुनौती यह होगी कि जब मशीन बहुत बड़ी मात्रा में औसत से बेहतर सामग्री पैदा करने लगेगी तब हम साहित्य में उत्कृष्टता की पहचान कैसे करेंगे?

‘भाषावाद 3.0’ में ‘लेखन और प्रकाशन के युग में एआई’ पर हुई चर्चा ने इसी संकट को सामने रखा। यदि मशीन के जरिए सामग्री तैयार करने की लागत लगभग शून्य के करीब पहुंचती है तो प्रकाशन की दुनिया में सामग्री की बाढ़ आ सकती है। किसी अच्छे लेखक को एक किताब लिखने में महीनों या वर्षों का समय लगता है। एआई के दौर में कोई भी व्यक्ति कुछ निर्देश देकर एक पूरी किताब तैयार कर सकता है। ऐसे में समस्या किताबों की कमी की नहीं होगी, बल्कि किताबों की अधिकता होगी। पाठक के सामने इतनी सामग्री होगी कि वह तय ही नहीं कर पाएगा कि उसे पढ़ना क्या है।

‘पाखी’ के लिए लेखकों द्वारा भेजी जाने वाली कई रचनाओं में एआई की छाप मुझे स्पष्ट नजर आने लगी है। यहीं संपादक की भूमिका खत्म होने के बजाय और महत्वपूर्ण हो सकती है। जब हर कोई लिख सकता होगा तो किसे प्रकाशित किया जाए, यह सवाल ज्यादा कठिन हो चला है। संपादक का काम तब केवल भाषा सुधारना नहीं है। उसे यह देखना होगा कि रचना के भीतर कोई वास्तविक अनुभव है या केवल कुशल भाषा, कोई विचार है या केवल विचार का अनुकरण, कोई नई दृष्टि है या पहले से मौजूद हजारों पाठों की पुनर्रचना। अगर संपादक केवल ‘मशीन मेड’ साहित्य में से सबसे चमकदार भाषा चुनने लगे तो वह साहित्य को बचाने के बजाय उसकी एकरूपता बढ़ा सकता है। साहित्य का मूल्य उसकी चमक में नहीं, उसकी विशिष्टता में होता है।

मैं समझता हूं इस चलते लेखक की भूमिका फिर से महत्वपूर्ण हो जाती है। लेखक केवल कहानी गढ़ने वाला व्यक्ति नहीं है। वह अपने समय का साक्षी भी होता है। प्रेमचंद ने जिस भारत को लिखा वह केवल कथानक नहीं था, वह अपने समय की सामाजिक संरचना और मनुष्य के संघर्ष का अनुभव था। मुक्तिबोध की बेचैनी केवल भाषा का प्रयोग नहीं थी, वह एक ऐतिहासिक और नैतिक संकट से निकली बेचैनी थी। निर्मल वर्मा का अकेलापन केवल सुंदर वाक्यों से पैदा नहीं हुआ था, बल्कि वह मनुष्य के भीतर के उस अकेलेपन से आया था जिसे लेखक ने महसूस किया था। साहित्य की ताकत शायद यहीं है कि वह केवल यह नहीं बताता कि क्या हुआ, वह यह भी बताता है कि मनुष्य के भीतर क्या घटा।

इसमें कोई शक नहीं कि मशीन घटनाओं का विवरण दे सकती है। वह प्रेम पर हजारों पंक्तियां लिख सकती है। वह मृत्यु पर कविता बना सकती है। वह मां की स्मृति पर कहानी लिख सकती है। लेकिन क्या वह उस बच्चे के भोगे को शब्द दे सकती है जिसने अपनी मां को खो दिया हो और पहली

बार मृत्यु को देखा हो? क्या वह किसी प्रिय व्यक्ति के चले जाने के बाद उसके कमरे में बची हुई गंध को याद कर सकती है? क्या वह उस लेखक की तरह अपराधबोध के साथ जाग सकती है जिसने किसी को दुःख पहुंचाया और वर्षों बाद उस घटना को कहानी में बदल दिया? साहित्य का बड़ा हिस्सा इसी अनकहे अनुभव से पैदा होता है।

यहां एक दिलचस्प विरोधाभास भी है। हम एआई से डर रहे हैं, लेकिन संभव है कि एआई साहित्य का अंत करने के बजाय साहित्य की ओर लौटने की हमारी जरूरत को और बढ़ा दे। जब हर तरफ मशीन से बना हुआ पाठ होगा तब मनुष्य शायद उस पाठ को खोजेगा जिसके पीछे किसी मनुष्य की आवाज सुनाई देती हो। जब हर कविता बहुत सुंदर होगी तब शायद हम उस कविता को तलाशेंगे जिसमें कवि की असफलता भी दिखाई देती हो। जब हर कहानी का कथानक बिल्कुल सधा हुआ होगा तब शायद हम उस कहानी को पढ़ना चाहेंगे जिसमें जीवन की तरह कुछ अनगढ़पन बचा हुआ हो। क्योंकि मनुष्य पूर्णता से ज्यादा अपने जैसे अनुभव को पहचानता है। इसीलिए यह भी संभव है कि एआई के इस दौर में साहित्य में लेखक के जीवन, उसकी प्रक्रिया और उसकी आवाज का महत्व बढ़े। पाठक यह जानना चाहे कि इस कहानी के पीछे कौन है? उसने इसे क्यों लिखा? वह किस समय से गुजर रहा था? उसके जीवन और समाज ने इस रचना को किस तरह आकार दिया?

अनुवाद के क्षेत्र में भी यही विरोधाभास दिखाई देता है। भारत जैसी बहुभाषी दुनिया में एआई एक बड़ी संभावना है। हमारे पास ऐसी अनेक भाषाएं हैं जिनका साहित्य दूसरी भारतीय भाषाओं के पाठकों तक बहुत कम पहुंचता है। यदि तकनीक इन भाषाओं के बीच दूरी कम कर सके तो यह साहित्य के लिए बड़ी उपलब्धि होगी। लेकिन अनुवाद की समस्या केवल भाषा की समस्या नहीं है। हर भाषा अपने साथ अपना समाज, इतिहास, लोक-स्मृति, मुहावरा, लय और सांस्कृतिक अनुभव लेकर चलती है। एक शब्द का अर्थ शब्दकोश में मिल सकता है, लेकिन उस शब्द के पीछे जो जीवन है, वह शब्दकोश में नहीं मिलता। ‘भाषावाद 3.0’ की बहस में यही बात सामने आई कि भारतीय भाषाओं के बीच सीधे अनुवाद की जरूरत बहुत बड़ी है। आज कई बार एक भारतीय भाषा का साहित्य दूसरी भारतीय भाषा तक अंग्रेजी या हिंदी जैसी सेतु भाषा (Bridge Language) के माध्यम से पहुंचता है। इससे अर्थ तो पहुंच सकता है, लेकिन साहित्यिक अनुभव की कुछ परतें रास्ते में बदल सकती हैं। रीता कोठारी ने भारतीय भाषाओं के बीच संवाद की कमी को भी महत्वपूर्ण प्रश्न बनाया और यह संकेत किया कि केवल अनुवादों की संख्या बढ़ना पर्याप्त नहीं है बल्कि भाषाओं और साहित्यिक परंपराओं के बीच वास्तविक संवाद भी जरूरी है। यहीं एआई का इस्तेमाल उपयोगी भी हो सकता है और खतरनाक भी। यदि मशीन किसी दुर्लभ भाषा